अलसीः बहुआयामी फसल व उन्नत खेती की तकनीक

राघवेंद्र प्रताप सिंह[1], विनय कुमार[1], विकेंदर कौर[1], धम्मा प्रकाश वानखेड़े[1] एवं ममता सिंह[1]

परिचयः

अलसी बहुमूल्य फसल है, अलसी के बीज से निकलने वाला तेल प्रायः खाने के उपयोग में हीं लिया जाता है बल्कि दवाइयाँ भी बनाई जाती है इसके तेल से पेंट वार्निश बनाने के साथ-साथ पैक इंक तथा प्रेस प्रिंटिंग हेतु स्याही तैयार करने में उपयोग किया जाता है। हमारे देश में अलसी की खेती लगभग **2.96** लाख हेक्ट. क्षेत्र में होती है।अलसी क्षेत्रफल की दृष्टि से भारत विश्व में द्वितीय स्थान तथा उत्पादन में तीसरा स्थान रखता है। मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश महाराष्ट्र, बिहार, राजस्थान व ओड़िसा प्रमुख अलसी उत्पादक राज्य है, पूरे भारत में उत्तरप्रदेश व मध्यप्रदेश का अलसी उत्पादन में **80** प्रतिशत योगदान है।

विवरणः

अलसी के पौधे में दौखियाँ एंव शाखाओं के निकलने की क्षमता अधिक होती हैं। अलसी का पौधा 6 से 7 शाखाओं वाला होता है! इस का तना मुलायम पत्तियाँ **20** से **40** मि.मि. लम्बी व **3** मि.मी.चैड़ी होती है एवं पौधे कि लम्बाई लगभग **70** से **120** से.मी. होती होती है।और अलसी की पत्तियाँ पतली एवं नुकीली होती हैं। बुआई के लगभग **2** माह बाद इसमें फूल आाने लगते हैं। अलसी पर प्रायः बैगनी फूल आते हैं इसके अलावा कुछ प्रजातियाँ है जिसके फूल लाल रंग के होते है,जो देखने में बड़े ही आकर्षक लगते है।अलसी के फूल में पांच पंखुडिया तथा पांच पुंके सर होते हैं प्रत्येक पौधे पर लगभग **60** से **120** फल लगे रहते है इसके प्रत्येक फल में पांच कोष्ट बने होते हैं प्रत्येक कोष्ट में सामान्यतः दो बीज बनते हैं इस तरह एक फल में दस बीज बनते हैं । अलसी का फूल लगभग **15** से.मी.चौड़ा होता है । अलसी का फूल प्रायःसुबह के समय **6** से **8** बजे के बीच में खिलता है फूल खिलने के तुरंत बाद परागकोष परागकण बिखेर देता है और इसका फूल दोपहर लगभग **2** बजे तक खिले रहते हैं उसके बाद मुरझा के गिर जाते हैं ।

अलसी का पौष्टिक महत्वः

अलसी में मुख्य पौष्टिक तत्व ओमेगा-3 वसीय अम्ल, अल्फालिनोलिक अम्ल, लिगनेन, प्रोटिन व रेशा होती है।अलसी ओमेगा-3 वसीय अम्ल का पृथ्वी पर सबसे बडा स्रोत है, जो की हमारे शरीर के लिए एक आवश्यक तत्व है और यह हमें हमारे भोजन के द्वारा ही मिलता है क्योकि यह हमारे शरीर के अन्दर नहीं बनता है। ओमेगा-3 हमारे शरीर के अंग जैसे- मस्तिष्क एंव आँखे आदि को विकसित करने में मदद करते है और साथ ही साथ रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढाता है। अलसी एवं गेंहू के आटे को मिलाकर खाना मधुमेह के रोगी के लिये एक लाभकारी भोजन है। जो एक मधुमेह के रोगी को खाने के लिये डॉक्टर भी सलाह देते हैं। इसलिए अलसी को एक पौष्टिक अहार के रूप में भी माना जाता है।

जलवायुः

अलसी की फसल को ठंड व शुष्क जलवायु की आवश्यकता पड़ती है। भारतवर्ष में अधिकतर अलसी की खेती रबी के मौसम में की जाती है।अलसी के वृद्धि काल में भारी वर्षा व बादल छाए रहना बहुत ही हानिकारक होता है। अलसी के लिए कम नमी की आवश्यकता होती है।

भूमि का चुनावः

अलसी के फसल के लिए काली भारी एंव दोमट (मटियार) मिट्टी सबसे उपयुक्त होती है। भूमि में उचित जल निकास का प्रबंध होना चाहिए क्योंकि जल-भराव अलसी के फसल के लिए हानिकारक है। आधुनिक संकल्पना के अनुसार उचित जल एवं

[1] भाकृअप - राष्ट्रीय पादप आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो

उर्वरक व्यवस्था करने पर किसी भी प्रकार की मिट्टी में अलसी की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है।

खेत की तैयारीः

अलसी का अच्छा अंकुरण प्राप्त करने के लिए खेत भुरभुरा एंव खरपतवार रहित होना चाहिए जिसके लिए खेत को दो से तीन बार जुताई करके तैयार करना चाहिए। अलसी का बीज छोटा एवं महीन होता है, इसलिये खेत का भुर भुरा होना अतिआवश्यक है जिससे बीज का अंकुरण अच्छे से होता है।

बुआई का समयः

असिंचित क्षेत्रों मे अक्टूबर माह के प्रथम पखवाड़े में तथा सिंचित क्षेत्रो में नवम्बर माह के प्रथम पखवाड़े में बुआई करनी चाहिए।

बीजदर एवं पौध दूरीः

अलसी की बुआई 20- 25 कि./हेक्ट. की दर से करनी चाहिए तथा पौध से पौध की दूरी 5 से 7 से.मी. व कतार से कतार की दूरी 30 से.मी. रखनी चाहिए तथा बीज को 2 से 3 से.मी. गहराई पर बोना चाहिए।

बीजोपचारः

बुआई के पूर्व बीज को कार्बेण्डाजिम की 2.5 से 3 ग्राम प्रतिकिलो बीज की दर से उपचारित करना चाहिए अथवा ट्राइकोडर्मा की 5 ग्राम एंव कार्बोक्सिन की 2 ग्राम मात्रा से प्रतिकिलो बीज को उपचारित कर के बीज की बुआई करनी चाहिए।

अलसी की प्रजातियाँ:

अलसी की प्रमुख प्रजातियों को जल प्रबंध के अनुसार अलग-अलग क्षेत्र के लिए बांट रखा है जैसे सिचिंत क्षेत्र के लिये अलग उपयुक्त प्रजातियाँ है और असिंचित क्षेत्र के लिये अलग उपयुक्त प्रजातियाँ है। जिस क्षेत्र में जल के उत्तम साधन उपलब्ध रहते है उन क्षेत्रों को सिंचित क्षेत्र कहा जाता है और जिन क्षेत्रों में जल की उत्तम व्यवस्था नहीं है इन क्षेत्रों को असिंचित क्षेत्र कहा जाता है। कुछ प्रमुख प्रजातियाँ जो सिंचित क्षेत्र में बोई जाती है इस प्रकार है। इसके अलावा जवाहर अलसी-9,जे.एल. एस-66, 67 व 73 आदि कुछ प्रमुख प्रजातियाँ है जो असिंचित क्षेत्र के लिए उपयुक्त मानी जाती हैं ।

उपयुक्त गुण:

अलसी न केवल अपने तैलीय गुणों के कारण अपितु महत्वपूर्ण औषधीय गुणों के कारण मानव जीवन में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। आयुर्वेद में अलसी को मंद सुगंधयुक्त, मधुर बल कारक, कफवात, पित्तनाशक गरम पौष्टिक, दर्द निवारक के नाम से जाना जाता है। गरम पानी डालकर केवल बीजो या इसके साथ एक तिहाई भाग मुलेठी का चूर्ण मिलाकर काढा बनाया जाता है जो रक्त अतिसार और मुत्र सम्बंधी रोगो में उपयोगी होता इसके साथ एटी फ्लोजेस्टिन नामक प्लास्टर का उपयोग हड्डियों के उपचार चोट, निमोनिया, मोच, जोड़ो की सूजन, शरीर में गांठ व फोडा उठने पर अलसी को औषधि के रूप में प्रयोग किया जाता है । अलसी में मुख्य पौष्टिक तत्व ओमेगा 3 फैटी एसिड, एल्फालिनोलिक एसिड, लिगनेन प्रोटीन व फाइबर होते है अलसी में लगभग 18 प्रतिशत ओमेगा व 3 प्रतिशत फैटी एसिड होते है।

कार्बनिक खादः

अलसी की फसल के बेहतर उत्पादन के लिए अच्छी तरह से सड़ी हुई गोबर की खाद अन्तिम जुताई के समय खेत मे अच्छी तरह से मिला देनी चाहिए।

उर्वरक प्रबंधनः

असिंचित अवस्था में अलसी को नाइट्रोजन, फास्फोरस व पोटाश की क्रमशः 40%20%20% कि.ग्रा./ हेक्ट. देना चाहिये। बोने से पहले सीडड्रिल से 2&3 सेंटीमीटर. की गहराई पर उर्वरक की पूरी मात्रा देना चाहिए।

सिंचित अवस्था में:

सिंचित अवस्था में अलसी की फसल को नाइट्रोजन,फास्फोरस व पोटाश की क्रमशः 60:80:40:20 कि. ग्रा./ हेक्ट. छिड़काव करना चाहिए नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बोने के पहले तथा बची नाइट्रोजन की मात्रा प्रथम सिंचाई के तुरन्त बाद टापड्रेसिंग के रुप में छिड़काव करना चाहिए।अलसी एक तिलहनी की फसल है और तिलहन की फसलों से अधिक उत्पादन लेने हेतु 20 से 25 किलोग्राम/ हेक्ट. गन्धक की मात्रा बीज बोने से पहले देना चाहिए।

खरपतवार प्रबंधन:

अलसी की फसल में जंगली चैलाई, बथुआ, अमरबेल, गाजर, घास, अल्टरनेन्था, सैंजी, इत्यादि प्रमुख खरपतवार का प्रकोप होता है। बुआई के कुछ समय बाद जब बीज अंकुरित हो जाए तो पहली निराई-गुडाई करके खरपतवार एवं घास को अच्छे से निकाल देना चाहिए ताकि पौधे का विकास अच्छी तरह से हो सके खेत के अन्दर खरपतवार एवं घास फूस रहने से पौधों का विकास रुक जाता है क्योंकि खरपतवार पौधों को दी जाने वाली पोषक तत्वों को ग्रहण कर लेता है जिससे पौधों के सभी क्रिया पूरी तरह से प्रभावित हो जाती है जो वह अपनी वुद्धि के लिए वह करता है। इसलिए एक अच्छी पैदावार के लिए खेत से खरपतवार एंव घासफूस निकालना अतिआवश्यक होता है। विभिन्न खरपतवार नाशी फ्लु क्लोरोलिन, एलाक्लोर व आक्साडाइ जिनका प्रयोग पूर्व अकुंरण व डाइक्लोफोप-मिथाईल 0-70 कि. ग्राम/ हेक्ट. के प्रयोग से बुआई के तीस दिनों के पश्चात खरपतवार को निंयत्रित किया जा सकता हैं।

जल प्रबंध:

अलसी के अच्छे उत्पादन के लिये दो या तीन सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। पहली सिंचाई बुआई के 35 दिन उपरान्त देनी चाहिए एवं दूसरी सिंचाई पौधे में फल आने के बाद देनी चाहिए इसके साथ-साथ जल निकासी की भी खेत में उत्तम व्यवस्था होनी चाहिए जिससे खेत में अधिक जल भराव न हो। क्योंकि अधिक जल भराव अलसी के अच्छे उत्पादन को प्रभावित करता है इसलिए जल प्रबन्ध के साथ-साथ एक अच्छे उत्पादन के लिए जल निकास की उत्तम व्यावस्था होनी चाहिए व अन्तिम सिंचाई 75 दिनों के बाद फसल को देनी चाहिए।

कटाई मडाई एंव भंडारण:

जब फसल में अलसी की पत्तियाँ सूखने लगे,फलियों में पीलापन आने लगे और अलसी की फसल 130 से 140 दिन पूरे हो गये हो, तो उसे उस समय कटाई के लिये उपयुक्त माना जाता है। कटाई के उपरान्त फसल को एक जगह सुरक्षित भंडारण करना चाहिए। भंडारण इस तरह से हो जिससे वर्षा से फसल को कोई नुकसान ना पहुँचे और फिर मडाई कर बीज का सुरक्षित भंडारण करना चाहिये भंडारण से पूर्व बीजों में आर्द्रता की मात्रा लगभग 8 प्रतिशत तक होनी चाहिए।

पौध संरक्षण:

अलसी में विभिन्न प्रकार के कीटव्याधियों का प्रकोप इस के वानस्पतिक विकास से लेकर फसल के पकने तक होता है,जिससे अलसी के उत्पादन व बीजों में तेल की मात्रा व गुणों में कमी के कारण किसानो को आर्थिक रूप से हानि का सामना करना पड़ता हैं। परन्तु, समय रहते फसल हानि को समुचित उपचार से नियंत्रित किया जा सकता है।

अलसी के कुछ प्रमुख रोग व कीटव्याधियाँ:

गालमक्खी- यह कीट सूक्ष्म अकार के आरेंज (नारंगी) रंग का लगभग 1 मि.मि से 1-5 मि.मि लम्बा होता है। व्यस्क मादा मक्खी पुष्पकली के बहया दल (दो सेपल के मध्य) पर 5-16 अण्डे देती है। अण्डे 3 से 5 दिनों में फूटकर सुण्डी (मैगट) का रूप लेती है जो कीट की हानिकारक अवस्था है। मैगट प्रारंभिक

अवस्था में काटने व चबाने वाले मुखाग से ओव्युल को हानि पहुँचाता है जिसके कारण पौध में बीज नहीं बन पाता। गालूमक्खी के प्रकोप से अलसी की फसल को लगभग 30 प्रतिशत से लेकर 70 प्रतिशत तक की हानि रिकार्ड की गई है।

थ्रिप्स- यह भूरे काले रंग के चूसक कीट होते हैं जिसका वैज्ञानिक नाम थ्रिप्सलिनि है। निम्फपुष्पकली के क्लोरोफिल को चूसकर अपना पोषण करते है तथा प्रौढ़ कीट पौधे के ग्रोविंग पाइंट को फीड करता है, जिसके कारण पुष्पकली से कैप्सूल का विकास समुचित रूप से नही होता है।

लीफमाइनर- इस कीट का प्रकोप पत्तियों पर अधिकांश रूप से होता है, चमकीले गहरे रंग के कीट सुण्डी पत्तियों के कोशिका द्रव्य को चूसकर सर्पिलाकार सुरंग बनाती है जिससे प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में अवरोध उत्पन्न होता है तथा पत्तियां पीले रूप में परिवर्तित होकर गिरने लगती हैं।

फलभेदककीट / बीटआर्मीवर्म- व्यस्क कैटरपिलर मध्यम अकार के हलके भूरे रंग का तथा सफेद धारियों वाला जिसका वैज्ञानिक नाम स्पोडेप्टोरा एक्सिगुआ है। कैटरपीलर पौधे के पत्तियो से लेकर कैप्सूल को क्षति पहुँचाते हैं। इस कीट की पहचान पत्तियों को अनियमित रूप से खाने तथा कैप्सूल में की जाने वाली सूक्ष्म छिद्र के आधार पर की जा सकती है यह सुण्डी अथवा लार्वा अवस्था पौध को अत्यधिक हानि पहुँचाती है। लार्वा अपने प्रारंभिक अवस्था में कैप्सूल में प्रवेश कर अन्दर के प्रमुख भाग को खाती है जिसके कारण बीज का विकासपूर्णतः नहीं हो पाता।

गेरूआरोग (रस्ट)- यह रोग मेलाम्पेसोरालाईनाई नामाक फफूंद के कारण होता है। रोग का प्रकोप प्रारंभ होने पर चमकदार नारंगी रंग के धब्बे पत्तियों के दोनो ओर बनते है तथा रोग के बढ़ने पर फफूंद व धब्बे संपूर्ण पौध पर फैल जाते हैं। फलस्वरूप उपज एवं बीज में तेल की मात्रा में कमी आती है।

उकठारोग- यह अलसी का प्रमुख रोग है जो मृदा जनित व बीज जनित फ्युजेरियम नामक फफूंद इस रोग का कारण है।इस रोग के प्रकोप से पौधा मुरझा कर गिरने लगता है। । रोग का प्रभाव बीज के अंकुरण से लेकर पौध के किसी भी अवस्था में हो सकता है।

अल्टरनेरिया ब्लाईट रोग- प्रायः इस रोग से पौधे का संपूर्ण संभाग प्रभावित होता है पर रोग की प्रारंभिक अवस्था में रोग का लक्षण पौध की निचली पत्तियों में छोटे गोल काले धब्बे से प्रारंभ होकर रोग की अधिकता में ये छोटे धब्बे आपस में मिलकर आकार में बड़े हो जाते है। रोग के लक्षण फूलों की पंखुड़ियो के निचले हिस्से में गहरे काले भूरे रंग के लम्बवत चकत्ते दिखाई देते है साथ ही पेडुण्कल सूखकर मुड़ जाता है, जिससे कैप्सूल में बीजों का विकास पूर्ण रूप से नहीं हो पाता।